भारत बैरल और ड्रम मैन्युफैक्चरिंग

कंपनी प्राइवेट लिमिटेड

बनाम

भारत बैरल कर्मचारी संघ

9 अप्रैल, 1987

[न्यायाधिपतिगण ई.एस.वेंकटरमैया और सब्यसाची मुखर्जी]

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947- धारा 10, 25 एफ और 25 एफ एफ प्राङ्न्याय सिद्धांत-औद्योगिक विवादों के लिए प्रयोज्यता-कोई व्यक्ति कर्मचारी है या नहीं, इसे बाद के औद्योगिक विवाद में फिर से नहीं उठाया जा सकता है यदि इसे अंततः पहले के विवाद में तय किया गया है।

अपीलकर्ता-कंपनी के कारखाने में लगभग 1100 स्थायी और साथ ही अस्थायी कर्मकार थे। कच्चे माल की अनुपलब्धता और अन्य बाध्यकारी परिस्थितियों के कारण अपीलकर्ता-कंपनी ने 30 सितंबर, 1971 को अपने सभी कर्मचारियों को सूचित करते हुए एक 'बंदी की सूचना' जारी की गयी कि 1 नवंबर, 1971 से कारखाने के बंद होने के कारण उनकी सेवाएं समाप्त हो जाएंगी और उन्हें औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25 एफ. एफ. एफ. के तहत मुआवजा दिया जाएगा। इसके बाद, कर्मकार धीमी चालों और तोड़फोड़ के विभिन्न कृत्यों में लिप्त हो गए, जिससे कारखाने

और कार्यालय का संचालन लगभग असंभव हो गया और आतंक, धमकी और बदनामी का माहौल व्याप्त हो गया। 30 अक्टूबर, 1971 को कामगार और स्टाफकर्मी अत्याधिक आक्रामक हो गए और प्रबंधकीय कर्मचारियों को धमकी देने के बाद उन्होंने दंगे, गुंडागर्दी और कंपनी की संपत्तियों के काफी हिस्से को नष्ट कर दिया। स्थिति को नियंत्रित करने के लिए पुलिस को बुलाना पड़ा। कामगार और अधिक हिंसक हो गए और उन्होंने निदेशकों और वरिष्ठ अधिकारियों को कारखाने से बाहर निकलने से रोक दिया और उन पर और पुलिस पर मिसाइलें फेंक दीं। काफी संख्या में पुलिस अधिकारी और सिपाही घायल हो गए और तब पुलिस ने लगभग 183 कर्मकारों को गिरफ्तार किया गया।

कंपनी ने अपने कर्मचारियों पर लागू स्थायी आदेशों के तहत 30 अक्टूबर, 1971 को जारी अपने नोटिस द्वारा तत्काल प्रभाव से कर्मकारों की सेवाओं को समाप्त कर दिया और नोटिस को विधिवत प्रकाशित किया गया।

इसके बाद, कर्मकारों ने एक औद्योगिक विवाद उठाया जिसे आई. टी. सं. 325/ 1971 के रूप में औद्योगिक अधिकरण को न्याय निर्णयन के लिए निर्देशित किया गया ।

1 नवंबर, 1971 से कारखाना पूरी तरह से बंद हो गया था और मई, 1972 तक कोई उत्पादन नहीं हुआ। अपीलकर्ता की दिनांक 7 जून, 1972

की सूचना के अनुसरण में कई कर्मचारी कारखाने में फिर से शामिल हो गए।

औद्योगिक अधिकरण के समक्ष संघ और कामगारों का मामला था कि कामगारों की सेवाओं को बंदी के कारण समाप्त कर दिया गया था और हालांकि औद्योगिक अधिकरण बंदी की वैधता या अवैधता के प्रश्न पर नहीं जा सकता है तो भी वे औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 25 एफ. एफ. एफ. के तहत मुआवजे के हकदार होंगे। अपीलकर्ता-कंपनी का तर्क था कि कामगारों को 30 अक्टूबर, 1971 को यानी कथित बंदी से पहले स्थायी आदेश 21 के तहत वैधता से मुक्त कर दिया गया था, और वह धारा 25 एफ. एफ. एफ.एस के तहत मुआवजे का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं था।

औद्योगिक अधिकरण के समक्ष प्रश्न यह था कि क्या कर्मकार 1 नवंबर, 1971 को बंदी के प्रभावी होने तक नियोजन में निरंतर थे या क्या वे 30 अक्टूबर, 1971 को स्थायी आदेश 21 के तहत जारी सेवोन्मुक्त की सूचना के आधार पर अपीलार्थी के कर्मचारी नहीं रहे ।

औद्योगिक अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया है कि बंदी के कारण कामगारों की सेवाये समाप्त करने से पूर्व ही 30 अक्टूबर, 1971 को उनको वैध रूप से सेवोन्मुक्त कर दिया गया था और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि बंदी के कारण उन्हें हटा दिया गया था, कि कामगारों की

सेवाओं को कम से कम 31 अक्टूबर, 1971 को सुबह से समाप्त कर दिया गया था, जब छुट्टी का आदेश प्रभावी हो गया था; कि उसके बाद कर्मचारी कंपनी की सेवा में नहीं थे और कथित बंदी होने के समय भी सेवा में नहीं थे और चूंकि कामगारों की सेवाओं की समाप्ति बंदी से जुड़ी हुई नहीं है, इसलिए वे बंदी के कारण किसी भी मुआवजे के हकदार नहीं होंगे। औद्योगिक अधिकरण ने 30 अक्टूबर, 1974 के अपने आदेश द्वारा इस निर्देश को खारिज कर दिया था। अधिनिर्णय को चुनौती नही दी गई और वह अंतिम हो गया।

इसके बाद 440 कर्मकारों के आग्रह पर एक और निर्देश आई. टी. सं. 245/1975 प्रस्तुत किया गया। अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया कि निर्देश की अनुसूची में शामिल कर्मकारों को 20 मार्च, 1980 यानी अधिनिर्णय की तारीख को हटा दिया गया माना जाना चाहिए, कि वे अधिनियम की धारा 25 के तहत छंटनी मुआवजे के हकदार थे और वे 31 अक्टूबर, 1971 से 20 मार्च, 1980 तक अपने पिछले वेतन का 75 प्रतिशत वसूल करने के हकदार थे। औद्योगिक अधिकरण ने प्रबंधन के इस तर्क को खारिज कर दिया कि वर्तमान मामला प्राङ्न्याय के सिद्धांत द्वारा वर्जित था और यह अभिनिर्धारित किया गया कि 30 अक्टूबर, 1971 के सेवोन्मुक्त नोटिस के तहत कर्मकारों की सेवाओं की समाप्ति अमान्य थी।

प्रबंधन ने उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका में उत्तरवर्ती अधिनिर्णय को चुनौती दी। याचिका को एकल न्यायाधीश ने खारिज कर दिया था। डिवीजन बेंच ने अपील को खारिज कर दिया।

अपील में, अपीलकर्ता प्रबंधन की ओर से इस न्यायालय के समक्ष यह प्रस्तुत किया गया था कि उत्तरवर्ती औद्योगिक औद्योगिक अधिकरण ने कर्मकारों को उनके अधिनिर्णय जारी करने तक प्रबंधन के रोजगार में मानने में गलती की थी जबकि प्रथम औद्योगिक अधिकरण ने माना था कि स्थायी आदेश 21 के तहत जारी 30 अक्टूबर 1971 के नोटिस द्वारा कर्मकारों को वैध रूप से उन्मोचित कर दिया गया था और समान पक्षों के बीच एक ही प्रश्न की जांच, प्राड्न्याय के सिद्धांत द्वारा बाधित हैं ।

अपील की अनुमति देते हुए और विशेष अनुमति याचिका का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित किया:

1. कि निसंदेह प्राड्न्याय का नियम औद्योगिक औद्योगिक अधिकरणों के समक्ष कार्यवाही पर लागू होता है लेकिन ऐसा नहीं है कि एक बार तय किए गए प्रश्न को कभी भी फिर से नहीं उठाया जा सकता है। प्रकरणों की कुछ श्रेणियां जैसे वेतन संरचना, सेवा शर्तों से संबंधित विवाद आदि जो परिस्थितियाँ बदलने और नई स्थितियाँ उत्पन्न होने पर उत्पन्न होती हैं, को प्राड्न्याय द्वारा बाधित नहीं किया जा सकता है। [834 एफ; 836 डी-ई]

बर्न एंड कंपनी, कलकत्ता बनाम उनके कर्मचारी, [1956] एस. सी. आर. 781;स्ट्रा बोर्ड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड के कर्मचारी बनाम मेसर्स स्ट्रॉ बोर्ड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड, [1974] 3 एस. सी. आर. 703; वर्कमेन ऑफ बाल्मर लॉरी एंड एंड कंपनी v. बाल्मर लॉरी एंड कंपनी [1964] 5 एस. सी. आर. 344 और एसोसिएटेड सीमेंट स्टाफ यूनियन और अन्य v. एसोसिएटेड सीमेंट कंपनी और अन्य, [1964] खंड 1 एल. एल. जे. 12, का अनुसरण किया गया।

2. प्रश्न यह है कि क्या संबंधित कर्मकार धारा 25 एफ के के तहत अधिनिर्णय की तिथि पर छंटनी मुआवजा और 31 अक्टूबर, 1971 से 20 मार्च, 1980 तक पिछले वेतन का भुगतान के हकदार थे, जिस तारीख को उन्होंने कारखाने में काम करना बंद कर दिया था उस तारीख से अधिनिर्णय की तिथि तक सेवा में रहने के उनके अधिकार पर निर्भर करता है। प्रथम निर्देश में, कर्मकारों ने विशेष रूप से धारा 25 एफ. एफ. एफ. के तहत इस आधार पर मुआवजे के भुगतान के लिए प्रार्थना की हैं कि बंद होने के नोटिस के अनुसार कारखाने को 1 नवंबर, 1971 से बंद कर दिया गया था, जिसके द्वारा इस स्थिति को स्वीकार किया गया हैं कि वे 1 नवंबर, 1971 से प्रबंधन के कर्मचारी नहीं रह गए थे। उस दावे का प्रबंधन द्वारा इस आधार पर विरोध किया गया था कि कर्मकारों को 30 अक्टूबर, 1971 के सेवोन्मुक्त की सुचना के अनुसरण में उन्मोचित कर दिया गया था। हालांकि प्रथम औद्योगिक अधिकरण ने माना कि सेवोन्मुक्त का प्रश्न

"कंपनी द्वारा लिए गए बचाव को देखते हुए आनुषंगिक प्रश्न" के रूप में माना गया।, परन्तु मामले का निर्णय केवल इस निष्कर्ष के आधार पर किया गया था कि कर्मकारों को 30 अक्टूबर, 1971 के नोटिस द्वारा वैध रूप से उन्मोचित कर दिया गया था। हालांकि उक्त औद्योगिक अधिकरण ने कहा था कि "इस प्रक्रम पर अभिलेख पर यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि सेवोन्मुक्त आदेश उचित नहीं है",

इसका तात्पर्य यह नहीं था कि सेवोन्मुक्त आदेश की वैधता को बाद में फिर से उठाया जा सकता है क्योंकि पहले औद्योगिक अधिकरण ने आगे कहा था,

"तब यह स्पष्ट होगा कि कंपनी के सभी कर्मचारियों को बंद प्रभावी होने से पहले ही 30 अक्टूबर, 1971 को कंपनी द्वारा उन्मोचित कर दिया गया था"। [836 एफ-एच; 837 ए-बी]

3. एकमात्र आधार जिस पर कर्मकारों का धारा 25 एफएफएफ के तहत दावा खारिज कर दिया गया था, वह यह हैं कि दिनांक 30 अक्टूबर 1971 के सेवोन्मुक्त नोटिस के कारण कर्मकार अपीलकर्ता के कर्मचारी नहीं रहे। पहले संदर्भ में सेवोन्मुक्त नोटिस की वैधता प्रत्यक्षतः और सारतः विवाद्यक थी। [837 बी-सी]

4. `प्रथम औद्योगिक अधिकरण के समक्ष कर्मकार यह अनुरोध कर सकते थे कि सेवोन्मुक्त करने की सुचना अवैध थी और इसलिए, वे 1 नवम्बर 1971 तक सेवा में बने रहे तथा धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवजे के हकदार थे। । कर्मकारों का यह मामला कि वह धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवजे के हकदार थे, प्रथम औद्योगिक अधिकरण ने यह कहते हुए खारिज कर दिया था कि कर्मकारों को सुचना दिनांक 30 अक्टूबर, 1971 द्वारा वैध रूप से सेवोन्मुक्त कर दिया गया था। प्रथम औद्योगिक अधिकरण का फैसला त्रुटिपूर्ण हो सकता है और उसे ठीक किया जा सकता था यदि उस अधिनिर्णय को चुनौती दी जाती पर उसे अंतिम बनने दिया गया। प्रथम औद्योगिक अधिकरण का निर्णय क्षेत्राधिकार के बिना नहीं दिया गया था और उसे कानून के किसी ज्ञात आधार पर शुन्य वर्णित नहीं किया जा सकता है [837 डी-एफ]

5. यह प्रश्न कि कोई व्यक्ति एक विशेष तिथि के बाद प्रबंधन के अधीन कर्मचारी था या नहीं, किसी उत्तरवर्ती मामले में पुनः नहीं उठाया जा सकता है, जहाँ किसी पूर्व प्रकरण में सक्षम क्षेत्राधिकार के किसी औद्योगिक औद्योगिक अधिकरण द्वारा, जहाँ उक्त प्रश्न निर्णय के लिए आवश्यक रूप से उठा, उसे पहले ही अंतिम रूप से निर्णीत किया जा चुका हो। [837 एफ] बुरान एंड कंपनी, कलकत्ता बनाम उनके कर्मचारी, [1956] एससीआर 781 और स्ट्रॉ बोर्ड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी के कर्मचारी लिमिटेड बनाम मैसर्स स्ट्रॉ

बोर्ड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड, [1974] 3 एससीआर 703, अनुसरण किया गया।

6. कर्मकारों ने पहले औद्योगिक अधिकरण के समक्ष बहाली या धारा 25 एफ के तहत मुआवज़े की राहत का दावा नहीं किया और खुद को केवल धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवज़े तक सीमित रखा जबकि प्रथम अधिनिर्णय के पारित होने से पूर्व ही कारखाना को 1972 में दोबारा खोला गया था। इसलिए कर्मकारों को दूसरे औद्योगिक अधिकरण, जिसने दूसरा निर्देश निर्णीत किया, के समक्ष उक्त मामले को पुन: उठाने और यह विरोध करने की कि वह निरंतर प्रबंधन के कर्मचारी रहे क्योंकि सेवोन्मुक्त और बंदी का नोटिस अवैध था, की अनुमति नहीं दी जा सकती हैं। दूसरे औद्योगिक अधिकरण को उक्त विरोध को यह मानकर खारिज कर देना चाहिए था कि दिनांक 30 अक्टूबर 1971 के सेवोन्मुक्त के नोटिस कि वैधता उसके समक्ष प्रश्नगत नहीं हैं। दूसरे औद्योगिक अधिकरण ने सेवोन्मुक्त नोटिस के वैधता के विवाद्यक की पुन:समीक्षा और विपरीत दृष्टिकोण देकर त्रुटि की हैं। इसलिए दूसरे औद्योगिक अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय दिनांक मार्च 20, 1980 अपास्त किये जाने योग्य हैं। [837 जी-एच; 838 ए-सी]

[न्यायालय ने अपीलकर्ता-प्रबंधन की इस प्रस्तुति की कि भले ही अधिनिर्णय को अपास्त कर दिया गया हैं पर वह श्रम आयुक्त के पास पड़े

48,00,000 रुपये की वापसी के दावा का अधिकार छोड़ रहे हैं और यह राशि दूसरे निर्देश के 440 कामगारों के बीच सामान रूप से, अनुग्रह राशि के रूप में वितरित की जा सकती है, की सराहना की और इसे स्वीकार किया और इस निर्देश में आवश्यक दिशा निर्देश जारी किये। न्यायालय ने यह भी निर्देश दिया कि कलेक्टर द्वारा वसूल की गई 1,63,000 रुपये की राशि अपीलकर्ता को वापस कर दी जाये।,

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारिताः सिविल अपील संख्या 1463/1986

बॉम्बे उच्च न्यायालय के अपील सं. 264/1985 में निर्णय और आदेश दिनांकित 26.03.1985 से

अपीलकर्ता की ओर से एफ.एस.नरीमन, ए.साण्डे, एस.सुकुमारन, एस.सी.शर्मा, सुश्री गोडबोले और डीएन मिश्रा।

प्रत्यर्थीगण की ओर से डॉ. वाईएस चितले, एनबी शेट्टी, पीएच पारेख, डॉ. बीवाई चंद्रचूड़ और पीके मनोहर। ।

इस न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति

श्री वेंकटरमैया द्वारा पारित किया गया: विशेष अनुमति द्वारा यह अपील, अपील संख्या 264 /1985 में बाम्बे उच्च न्यायालय के दिनांक 26 मार्च 1985 के फैसले के खिलाफ दायर की गई है, जिसमें उस न्यायालय की रिट याचिका संख्या 867/1980 में विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले दिनांक 18 जनवरी 1984, की पुष्टि की गई हैं ।,अपीलकर्ता एक कंपनी है

जो बम्बई में अपने कारखाने में, बैरल और ड्रम के निर्माण के व्यवसाय में लगी हुई है। वर्ष 1971 में इस कंपनी ने लगभग 1100 कामगार, जिनमे लगभग 600 स्थायी कामगार और 500 अस्थायी कामगार थे, को काम पर लगाया। यह आरोप है कि 1968 से कारखाना रूक-रूक कर काम कर रही थी और कच्चे माल की अनुपलब्धता और अन्य बाध्यकारी परिस्थितियों के कारण स्थिति और खराब हो गई थी। 1971 तक कंपनी को, अपने कारखाने को बंद करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नही दिख रहा था और तदनुसार उसने 30 सितम्बर, 1971 को "एक बंद करने का नोटिस" जारी किया, जिसे नोटिस बोर्ड पर विधिवत प्रदर्शित किया गया और उसने अपने सभी कर्मचारियों को यह भी सूचित किया कि उनकी सेवाएं कारखाना को बंद करने के कारण 1 नवंबर, 1971 से समाप्त कर दी जाएगी। कर्मकारों को यह भी सूचित किया गया कि उन्हे औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 25 एफ एफ एफ के तहत मुआवजा दिया जाएगा। अपीलकर्ता का आरोप है कि 30 सितंबर 1971 को बंद करने करने का नोटिस प्रदर्शित होने के तुरंत बाद कर्मकार धीमी रणनीति और तोडफोड के विभिन्न कृत्यों में शामिल हो गए, जिससे कारखाना और कार्यालय का चलना लगभग असंभव हो गया। सारा काम ठप्प हो गया। आरोप है कि अक्टूबर महिने के दौरान कर्मकारों की बैठकें हुईं और आतंक, धमकी और बदनामी का माहौल बना रहा। 30 अक्टूबर, 1971 को पहली पारी के शुरू होने के साथ ही अर्थात व्यवहारिक

रूप से बंद करने की सूचना के संदर्भ में 1 नवंबर, 1971 को बंद होने की प्रभावी तिथि की पूर्व संध्या पर, अपीलकर्ता के कारखाने के परिसर में बहुत गंभीर और तनावपूर्ण माहौल व्याप्त हो गया और दोपहर तक सभी कर्मचारी और स्टाफ के सदस्य अधिक से अधिक आक्रामक हो गए और प्रबंधकीय कर्मचारियों को धमकी देने के बाद दंगे, गुंडागर्दी के कृत्यों का सहारा लेने लगे और अपीलकर्ता की संपतियों के काफी हिस्से को नष्ट कर दिया। दूसरी पारी के कर्मकारों के पहली पारी के कर्मकारों के साथ शामिल हो जाने से स्थिति और भी बिगड गयी। पहली पारी के कर्मचारी कारखाने के परिसर में ही रहे और अपीलकर्ता के कार्यालय जहां निदेशक और वरिष्ठ अधिकारी मौजूद थे, की ओर जाने वाले मार्ग पर अनाधिकृत रूप से उकड़ूँ बैठ गए, और इस प्रकार मार्ग अवरूद्ध हो गया। संघ नेताओं ने निदेशकों और अधिकारियों के खिलाफ भडकाउ और अपमानजनक भाषा का इस्तेमाल करते हुए कामगारों को संबोधित किया। उस समय प्रबंधक ने पुलिस से सहायता का अनुरोध किया। तदनुसार पुलिस बल पहुंच गया। सहायक पुलिस आयुक्त एसएन मिनोचर होमजी ने कामगारों से अपील की कि वे निदेशकों और वरिष्ठ अधिकारियों को कारखाना छोडने से न रोकें। उक्त अपील को नजरअंदाज करते हुए, संघ और वरिष्ठ नेताओं ने निदेशकों और वरिष्ठ अधिकारियों का ''घेराव'' किया और जब पुलिस ने निदेशकों और वरिष्ठ अधिकारियों को जाने में सहायता करने की कोशिश की, तो कर्मकारों पुलिस पक्ष पर टूट पडे और उन पर हमला करने की कोशिश की। जब

पुलिस ने विरोध करने की कोशिश की तो कामगार और अधिक हिंसक हो गए और उन्होंने पुलिस और निदेशकों और अधिकारियों, उनकी कारों और पुलिस वैन पर मिसाइलें जैसे नट, पीसने वाली पहिये, सोडा पानी की बोतलें, पत्थर, ईंट-पत्थर आदि फेंके। एक तेज मिसाइल सहायक पुलिस आयुक्त की आँख पर लगी और उनकी आँख चली गई। करीब 26 पुलिस पदाधिकारी व सिपाही घायल हो गये। निदेशक की कार पर, एक पीसने वाला पहिया फेंकने से घातक चोट लग सकती थी, लेकिन केवल कार बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गई । 6,50,000/- रूपये की मशीनरी का नुकसान हुआ। इसके बाद पुलिस ने 183 कर्मचारियों को गिरफ्तार कर लिया, जबकि बाकी भाग गये।

कानून और व्यवस्था की गंभीर स्थिति को देखते हुए, कंपनी ने अपने नोटिस 30 अक्टूबर, 1971 के द्वारा कर्मकारों की सेवाओं को तत्काल प्रभाव से समाप्त करने का निर्णय लिया और अपीलकर्ता के कर्मचारियों के लिए लागू, स्थायी आदेश जारी किए। उक्त नोटिस, नोटिस बोर्ड के साथ-साथ दिनांक 1 नवंबर 1971 को दैनिक समाचार पत्र "नवशक्ति" और "फ्री प्रेस जर्नल" दोनों में विधिवत रूप से प्रकाशित किया गया था।

इसके बाद कर्मकारों ने एक औद्योगिक विवाद उठाया और महाराष्ट्र सरकार ने 9 नवंबर 1971 के अपने निर्देश आदेश द्वारा विवाद को श्री जीके

पाटणकर के औद्योगिक औद्योगिक अधिकरण के पास निर्णय के लिए भेज दिया।

निर्देश के निबंधन निम्न थे:

"(i) क्या कंपनी द्वारा 30 सिंतबर 1971 के नोटिस द्वारा घोषित बंद की प्रकृति अस्थायी अवधि के लिए है और कर्मकारों के विभिन्न प्राधिकरण के समक्ष लंबित दावों को विफल करने के लिए है।

(ii) क्या उक्त बंद कानूनी और सद्भाविक है, यदि नहीं तो बाध्यकारी बेरोजगारी की अवधि के लिए मजदूरी के अलावा कर्मकारों को और क्या राहत दी जानी चाहिए?

(iii) यदि बंद कानूनी और सद्भाविक है तो क्या कर्मकार औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25 एफ के प्रावधानों के अनुसार या धारा 25 एफएफएफ के प्रावधानों के तहत मुआवजें के हकदार है।"

उपरोक्त निर्देश को आई.टी. संख्या 325/1971 के रूप में क्रमांकित किया गया था। प्रबंधन का आरोप है कि काररखाना 1 नंवबर, 1971 से पूरी तरह से बंद हो गया था और मई, 1972 तक कोई उत्पादन नहीं हआ था। इस अवधि के दौरान कारखाने के पास कामगारों की बैठकें और झडपें होती थी। मई, 1972 में दिल्ली उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता द्वारा दायर

एक रिट याचिका में अपने आदेश दिनांक 19 मई 1972 द्वारा मेसर्स हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड को अपीलकर्ता को स्टील शीट की आपूर्ति तुरंत फिर से शुरू करने के लिए निर्देशित किया। इस आदेश के मददेनजर अपीलकर्ता ने 7 जून, 1972 को कार्यालय के साथ-साथ कारखाने के मुख्य द्वार के नोटिस बोर्ड पर एक नोटिस लगाया, जिसमें पूर्व कर्मकारों को सलाह दी गई थी कि जो पूर्व कर्मकार स्वयं को नियोजन हेतु पेश करना चाहते है वह अपीलकर्ता को सूचित कर सकते हैं। यह भी कहा गया है कि ऐसे पूर्व कर्मकारों को प्राथमिकता दी जाएगी जो शांतिपूर्वक काम कर सकते है। इस नोटिस के बाद 10 अगस्त, 1972 और 13 अक्टूबर 1972 को ऐसे दो और नोटिस जारी किये गए। कई कर्मकार कारखाने में फिर से शामिल हो गए।

अब, हम आई टी संख्या 325/1971 में औद्योगिक अधिकरण को दिए गए निर्देश पर वापस लौंटगें। उस मामले में, हालांकि सुनवाई में पक्षकारों ने अपने अभिवचनो में विभिन्न दलीलें दी थी, लेकिन संघ का मामला था कि कर्मकारों की सेवाएं बंद होने के कारण समाप्त हुई जबकि जबकि कंपनी ने तर्क दिया था कि कथित बंद के प्रभावी होने से पहले ही उन्हें बर्खास्त कर दिया गया था (पेपर बुक का पृष्ठ 147)। कर्मकारों की ओर से यह तर्क दिया गया कि 'कामगारों की सेवाएं बंद होने के कारण समाप्त हुई और हालांकि औद्योगिक अधिकरण बंद की वैधता या अवैधता के प्रश्न पर नहीं जा सकता है, फिर भी जब कर्मकारों की सेवाएँ बंदी के कारण समाप्त होती हैं तो वे आई डी अधिनियम की धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवजे का

हकदार होंगे (पेपर बुक का पृष्ठ 150)। प्रबंधन ने औद्योगिक अधिकरण के समक्ष दोहराया कि वह अधिनियम की धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवजे का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं हैं क्योंकि स्थायी आदेश 21 के तहत कर्मकारों को 30 अक्टूबर 1971 को उन्मोचित कर दिया गया था । उपरोक्त स्थिति में अधिकरण को यह तय करने की आवश्यकता थी कि क्या कर्मकार दिनांक को 1 नवबंर, 1971 को बंद के प्रभावी होने तक नियोजन में रहे या वे स्थायी आदेश 21 के तहत जारी सेवोन्मुक्त के नोटिस के आधार पर 30 अक्टूबर 1971 या 31 अक्टूबर 1971 को प्रबंधन के कर्मचारी नहीं रहें। उपरोक्त प्रश्न पर अधिकरण ने अपने निष्कर्ष दर्ज किये । हम उन्हे उनके शब्दो में बताएगें। अधिकरण ने कहाः

> "इसके बाद यह अनुसरण होगा कि कर्मकारों को बंद के कारण उनकी सेवाएं समाप्त होने से पहले ही उन्मोचित कर दिया गया था । इसलिए, यह नही कहा जा सकता है कि मौजूदा परिस्थितियो में कर्मकारों की बंद के कारण छंटनी हुई हो"(पेपर बुक का पृष्ठ 155)।

उक्त निर्णय लागू है और इसलिए, सेवोन्मुक्त के आदेश के कारण कर्मचारियों की सेवाएं 31 अक्टूबर 1971 को कम से कम सुबह 10:30 बजे समाप्त कर दी गई है (पेपर बुक का पृष्ठ 155)। 'इसलिए, सेवोन्मुक्त आदेश, किसी भी स्थिति में, 31 अक्टूबर 1971 को सुबह 10:30 बजे से प्रभावी हो

गया। इसलिए कामगार उसके बाद कंपनी की सेवा में नही थे और कथित बंद के समय भी कंपनी की सेवा में नही थे

> "(पेपर बुक का पृष्ठ 159)। 'तथ्य यह है कि कामगारों की सेवाएं वैध रूप से उन्मोचित करने के कारण समाप्त की गयी थी और इसलिए जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वे बंद होने के कारण किसी भी राहत के हकदार नही होंगे, भले ही यह मान लिया जाए कि कथित बंद किया गया था (हमारे द्वारा रेखांकित किया गया)(पेपर बुक का पृष्ठ 159)।"

'यह बिंदु कि क्या कामगार धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवजे के हकदार होंते। इस पर संघ की ओर से श्री कामरेकर द्वारा तर्क दिया गया और मैं इस बात से सहमत हूँ कि यदि कामगारों की सेवाएं बंद के कारण समाप्त की जाती तो वे आई डी अधिनियम की धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवजे के हकदार होंते। हालांकि यह पहले ही पाया जा चुका है कि कामगारों की सेवाएं बंद होने के कारण समाप्त नहीं हुई थी और इसलिए मुआवजे का सवाल ही नहीं उठता' (पेपर बुक का पृष्ठ 162)।

> "तब यह स्पष्ट होगा कि कंपनी के समस्त कामगार बंद प्रभावी होने से पहले 30 अक्टूबर 1971 को कंपनी द्वारा उन्मोचित किये जा चुके थे "

(पेपर बुक का पृष्ठ 164)। चूंकि कर्मकारों की सेवाओं की समाप्ति बंद होने से जुडी नही है, इसलिए कामगार बंद होने के कारण किसी भी मुआवजे के हकदार नहीं होंगे(पेपर बुक का पृष्ठ 165)। इन निष्कर्षो के साथ निर्देश को औद्योगिक औद्योगिक अधिकरण ने अपने आदेश दिनांक 30 अक्टूबर 1974 द्वारा खारिज कर दिया था। आई टी संख्या 325/1971 में पारित उक्त अधिनिर्णय चुनौती रहित रहा और अंतिम बन गया। इसके बाद 440 कर्मकारों के कहने पर ही महाराष्ट्र सरकार द्वारा 10 जुलाई 1975 को अधिनियम की धारा 10(1)(डी) के तहत श्री जीके पाटनकर के उसी औद्योगिक औद्योगिक अधिकरण को एक और निर्देश दिया गया था, जिसे निर्देश आई टी संख्या 245/1975 के रूप में क्रमांकित किया गया था और इस बार संदर्भित विवाद के बिंदु इस प्रकार थेः

> ‘‘(1) सभी कर्मचारी जिनके नाम अनुबंध ए में उल्लिखित हैं, उन्हे पूरे पिछले वेतन और सेवा की निरंतरता के साथ बहाल किया जाए, उनकी स्थिति, अधिकारों और विशेषाधिकारों को इस प्रकार बहाल किया जाए जैसे कि सेवा में कोई रूकावट नहीं थी।
>
> (2) इन कर्मचारियों को मामले के अंतिम निपटान तक अंतरिम राहत के रूप में एक वर्ष का वेतन दिया जाना चाहिए।"

निर्देश की अनुसूची में उन 440 कर्मकारों के नाम शामिल किए गए, जो 30 अक्टूबर, 1971/31 अक्टूबर, 1971 को अपने सेवोन्मुक्त से पूर्व कर्मचारी थे। वे ऐसे कर्मकार थे जिन पर आई टी संख्या 325/1971 में पारित पूर्व अधिनिर्णय बाध्यकारी था।दूसरे निर्देश आई टी संख्या 245/1975 का निपटारा होने तक औद्योगिक अधिकरण की सदस्यता बदल चुकी थी और श्री जीके पाटणकर के स्थान पर श्री एम ए देशपांडे को नियुक्त किया गया था। श्री एमए देशपांडे ने 20 मार्च, 1980 को अपना अधिनिर्णय पारित किया। उन्होने यह निर्धारित किया कि निर्देश की अनुसूची में शामिल कर्मकारों को 20 मार्च 1980 यानी अधिनिर्णय की तारीख पर छंटनी किए हुए माना जाना चाहिए, वे अधिनियम की धारा 25 एफ में निर्धारित छंटनी के मुआवजे के हकदार थे और वे 31 अक्टूबर 1971 से 20 मार्च 1980 तक अपने पिछले वेतन का 75 प्रतिशत वसूलने का हकदार थे। उपरोक्त अधिनिर्णय औद्योगिक अधिकरण द्वारा इस तर्क को खारिज करते हुए पारित किया गया था कि वर्तमान मामला प्राङ्न्याय के सिद्धान्त द्वारा वर्जित किया गया था और यह मानते हुए कि अक्टूबर 1971 के सेवोन्मुक्त नोटिस के तहत कर्मकारों की सेवाओं की समाप्ति अमान्य थी। इस स्तर पर अन्य सभी निष्कर्षो का उल्लेख करना आवश्यक नही है क्योंकि इस मामले में जांच करने के लिए एकमात्र बिंदु यह है कि क्या प्राङ्न्याय के प्रश्न पर निर्णय सही है या नही।

उत्तरवर्ती अधिनिर्णय दिनांकित 20 मार्च 1980 से व्यथित होकर प्रबंधन ने रिट याचिका संख्या 867 /1980 में उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की। उक्त याचिका पर सुनवाई करने वाले विद्वान एकल न्यायाधीश ने इसे 18 जनवरी 1984 को खारिज कर दिया और उनके निर्णय के विरुद्ध एक अपील अपील संख्या 264 /1985 दायर की गयी जिसे उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच ने दिनांक 26 मार्च 1980 को खारिज कर दिया था । विशेष अनुमति द्वारा यह अपील उच्च न्यायालय के उक्त फैसले के खिलाफ प्रबंधन द्वारा दायर की गयी ।

प्रबंधन द्वारा हमारे सामने मुख्य प्रश्न यह उठाया गया है कि उत्तरवर्ती औद्योगिक औद्योगिक अधिकरण (श्री एमए देशपांडे) ने कर्मकारों को उनके अधिनिर्णय जारी करने तक प्रबंधन के रोजगार में मानने में गलती की थी जबकि प्रथम औद्योगिक अधिकरण (श्री जीके पाटनकर) ने माना था कि स्थायी आदेश 21 के तहत जारी 30 अक्टूबर 1971 के नोटिस द्वारा कर्मकारों को वैध रूप से उन्मोचित कर दिया गया था और समान पक्षों के बीच एक ही प्रश्न की जांच, प्राड्न्याय के सिद्धांत द्वारा बाधित हैं ।

निसंदेह प्राड्न्याय का नियम औद्योगिक औद्योगिक अधिकरणों के समक्ष कार्यवाही पर लागू होता है। बर्न एंड कंपनी, कलकत्ता बनाम कर्मचारी, 1956 एससी आर 781 पृष्ठ 789-90 में इस न्यायालय ने यह निर्धारित किया कि :

"क्या हम यह मान सकते हैं कि पूरी सुनवाई के बाद पार्टियों के बीच विवाद वाले मामले पर दिए गए अधिनिर्णय का कोई प्रभाव नहीं रह जाता है यदि उनमें से कोई भी इसे धारा 19(6) के तहत अस्वीकार कर देता है और जब मामला फिर से उसे निर्णय के लिए दिया जाता हैं तो औद्योगिक अधिकरण के पास नए सिरे से प्रयास करने के लिए आगे बढ़ने के लिए, एक बार फिर से पुरे आधार को देखने और नए निर्णय पर आने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं होता हैं। यह सर्वमान्य सिद्धांत के विपरीत होगा कि किसी मामले पर किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा पूर्ण जांच के बाद दिए गए निर्णय को दोबारा उठाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। इसी सिद्धांत पर सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 में प्राङ्न्याय का नियम आधारित है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह धारा वर्तमान मामले में लागू नहीं होती है, लेकिन इसमें अंतर्निहित सिद्धांत, कहावत "इंटरेस्ट रिपब्लिका यूट सिट फिनिस लिटियम " में व्यक्त किया गया है, जो ठोस सार्वजनिक नीति पर आधारित है और सार्वभौमिक अनुप्रयोग का है। (ब्रूम्स लीगल मैक्सिम्स, दसवां संस्करण, पृष्ठ 218 देखें)। शेओपर्सन सिंह बनाम रामनंदन प्रसाद सिंह [1916] एल.आर 43 आई 91 में सर

लॉरेंस जेनकिंस, सीजे ने कहा, "प्राड्न्याय का नियम तय होता है।" "उस बुद्धि के द्वारा जो सर्वदा के लिए है" और अच्छे कारण हैं कि यह सिद्धांत औद्योगिक अधिकरणों के निर्णयों पर भी लागू होना चाहिए। पूंजी और श्रम के बीच संबंध को विनियमित करने वाले विधान के दो उद्देश्य हैं। इसका उद्देश्य उन कर्मकारों को उनके श्रम के लिए उचित रिटर्न सुनिश्चित करना है जिनके पास पूंजी के साथ समान शर्तों पर व्यवहार करने की क्षमता नहीं है। इसका उद्देश्य नियोक्ता और कर्मचारियों के बीच विवादों को रोकना भी है, ताकि उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े और समाज के व्यापक हितों को नुकसान न हो। अब, अगर हम मानते हैं कि धारा 19(6) के तहत अस्वीकार किए जाने पर कोई निर्णय अपनी शक्ति खो देता है और पूरा विवाद बड़े पैमाने पर होता है, तो परिणाम यह होगा कि कोई भी पक्ष खुद को अधिनिर्णय के साथ सामंजस्य बिठाने और काम करने से दूर इसे लंबे संघर्ष के अभियोजन में महज़ एक चरण मानेगे, और औद्योगिक शांति लाने से दूर, अधिनिर्णय पार्टियों को नए जोश के साथ शत्रुतापूर्ण कार्रवाई फिर से शुरू करने से पहले सांस लेने का समय देने युद्धविराम के अलावा और कुछ नहीं साबित होंगे। दूसरी ओर, यदि हम

उन्हें दीर्घकालिक संचालन के उद्देश्य के रूप में मानते हैं और साथ ही यह मानते हैं कि वे उन परिस्थितियों में परिवर्तन होने पर जिन पर वे आधारित थे संशोधित होने के लिए उत्तरदायी हैं, तो विधायिका के दोनों उद्देश्य पूर्ण होंगे। औद्योगिक अधिकरण द्वारा द आर्मी एंड नेवी स्टोर्स लिमिटेड, बॉम्बे बनाम देयर वर्कमेन [1951] 2 एल.एल.जे. 31 और फोर्ड मोटर कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम देयर वर्कमेन [1951] 2 एल.एल.जे. 231 मामले में खुद यही विचार रखा गया है और हमारी राय है कि वे सही सिद्धांत निर्धारित करें, और अपीलीय औद्योगिक अधिकरण के पास उनका अनुसरण न करने का कोई आधार नहीं है।"

वर्कमेन ऑफ द स्ट्रॉ बोर्ड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड बनाम मेसर्स स्ट्रॉ बोर्ड मैन्युफैक्चरिंग लिमिटेड, [1974] 3 एस. सी. आर. 703 में यही विचार व्यक्त किया गया। इस न्यायालय ने पृष्ठ संख्या 717 पर निर्धारित किया कि:

अब यह अच्छी तरह से स्थापित हो गया है कि, हालांकि संपूर्ण सिविल प्रक्रिया संहिता औद्योगिक न्यायनिर्णयन पर लागू नहीं होती है, फिर भी, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 के तहत निर्धारित प्राङ्न्याय सिद्धांत, जहां भी संभव हो, बहुत अच्छे कारणों से लागू होते हैं। ऐसा

इसलिए है क्योंकि एक ही नियोक्ता और उसके कर्मचारियों के बीच एक ही विवाद की मुकदमेबाजी और आंदोलन और पुनः आंदोलन की बहुलता औद्योगिक शांति के लिए अनुकूल नहीं होगा, जो कि औद्योगिक न्यायनिर्णयन पर असर डालने वाले सभी श्रम कानूनों का मुख्य उद्देश्य है। लेकिन क्या किसी बाद के मामले में विवाद का मामला पहले सारतः और प्रत्यक्षतः उन्हीं पक्षों के बीच था और उस पर सुनवाई की गई थी और अंततः औद्योगिक अधिकरण द्वारा निर्णय लिया गया था, यह प्रासंगिक विचार का विषय होगा और यह निर्धारित करने से पहले की किसी प्रकरण में प्राङ्न्याय के सिद्धांत आकर्षित होते हैं, तय करना होगा।

हम जल्दबाजी में यह कहना चाहेंगे कि उपरोक्त टिप्पणियों का मतलब यह नहीं है कि जिस प्रश्न पर एक बार निर्णय हो गया, उस पर दोबारा कभी विचार नहीं किया जा सकता। प्रकरणों की कुछ श्रेणियां जैसे वेतन संरचना, सेवा शर्तों से संबंधित विवाद आदि जो परिस्थितियाँ बदलने और नई स्थितियाँ उत्पन्न होने पर उत्पन्न होती हैं, को प्राङ्न्याय द्वारा बाधित नहीं किया जा सकता है। वर्कमेन ऑफ बाल्मर लॉरी एंड एंड कंपनी बनाम बाल्मर लॉरी एंड कंपनी [1964] 5 एस. सी. आर. 344 और एसोसिएटेड सीमेंट स्टाफ यूनियन और अन्य बनाम एसोसिएटेड सीमेंट कंपनी और अन्य, [1964] खंड 1 एल. एल. जे. 12 वह मामले हैं जो इस तरह के प्रकरणों के श्रेणी में आते हैं।

इस प्रकरण में हमारे समक्ष प्रश्न हैं कि क्या संबंधित कर्मकार धारा 25 एफ के के तहत अधिनिर्णय की तिथि पर छंटनी मुआवजा और 31 अक्टूबर, 1971 से 20 मार्च, 1980 तक पिछले वेतन का भुगतान के हकदार थे, जिस तारीख को उन्होंने कारखाने में काम करना बंद कर दिया था, उस तारीख से अधिनिर्णय की तिथि तक सेवा में रहने के उनके अधिकार पर निर्भर करता है। प्रथम निर्देश में, कर्मकारों ने विशेष रूप से धारा 25 एफ. एफ. एफ. के तहत इस आधार पर मुआवजे के भुगतान के लिए प्रार्थना की हैं कि बंद होने के नोटिस के अनुसार कारखाने को 1 नवंबर, 1971 से बंद कर दिया गया था, जिसके द्वारा इस स्थिति को स्वीकार किया गया हैं कि वे 1 नवंबर, 1971 से प्रबंधन के कर्मचारी नहीं रह गए थे। उस दावे का प्रबंधन द्वारा इस आधार पर विरोध किया गया था कि कर्मकारों को 30 अक्टूबर, 1971 के सेवोन्मुक्त की सुचना के अनुसरण में उन्मोचित कर दिया गया था। हालांकि प्रथम औद्योगिक अधिकरण ने माना कि सेवोन्मुक्त का प्रश्न "कंपनी द्वारा लिए गए बचाव को देखते हुए आनुषंगिक प्रश्न" के रूप में माना गया, परन्तु मामले का निर्णय केवल इस निष्कर्ष के आधार पर किया गया था कि कर्मकारों को 30 अक्टूबर, 1971 के नोटिस द्वारा वैध रूप से उन्मोचित कर दिया गया था। हालांकि उक्त औद्योगिक अधिकरण ने कहा था कि "इस प्रक्रम पर अभिलेख पर यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है सेवोन्मुक्त आदेश उचित नहीं है ", इसका

तात्पर्य यह नहीं था कि सेवोन्मुक्त आदेश की वैधता को बाद में फिर से उठाया जा सकता है क्योंकि पहले औद्योगिक अधिकरण ने आगे कहा था,

> "तब यह स्पष्ट होगा कि कंपनी के सभी कर्मचारियों को बंद प्रभावी होने से पहले ही 30 अक्टूबर, 1971 को कंपनी द्वारा उन्मोचित कर दिया गया था"।

एकमात्र आधार जिस पर कर्मकारों का धारा 25 एफएफएफ के तहत दावा खारिज कर दिया गया था, वह यह हैं कि दिनांक 30 अक्टूबर 1971 के सेवोन्मुक्त नोटिस के कारण कर्मकार, अपीलकर्ता के कर्मचारी नहीं रहे। पहले निर्देश में सेवोन्मुक्त नोटिस की वैधता प्रत्यक्षतः और सारतः विवाद्यक थी। प्रथम औद्योगिक अधिकरण की उपरोक्त टिप्पणियाँ, जिस पर विद्वान एकल न्यायाधीश ने भरोसा किया है, कर्मकारों के मामले को आगे नहीं बढ़ाती है। प्रथम औद्योगिक अधिकरण के समक्ष कर्मकार यह अनुरोध कर सकते थे कि सेवोन्मुक्त की सुचना अवैध थी और इसलिए, वे 1 नवम्बर 1971 तक सेवा में बने रहे तथा धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवजे के हकदार थे। । कर्मकारों का यह मामला कि वह धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवजे के हकदार थे, प्रथम औद्योगिक अधिकरण ने यह कहते हुए खारिज कर दिया था कि कर्मकारों को सुचना दिनांक 30 अक्टूबर, 1971 द्वारा वैध रूप से सेवोन्मुक्त कर दिया गया था। प्रथम औद्योगिक अधिकरण का फैसला त्रुटिपूर्ण हो सकता है और उसे ठीक किया जा सकता था यदि

उस अधिनिर्णय को चुनौती दी जाती पर उसे अंतिम बनने दिया गया। प्रथम औद्योगिक अधिकरण का निर्णय क्षेत्राधिकार के बिना नहीं दिया गया था और उसे कानून के किसी ज्ञात आधार पर शुन्य वर्णित नहीं किया जा सकता है । यह प्रश्न कि कोई व्यक्ति एक विशेष तिथि के बाद प्रबंधन के अधीन कर्मचारी था या नहीं, किसी ऊपर उल्लिखित परिस्थितियों में उत्तरवर्ती मामले में पुनः नहीं उठाया जा सकता है, जहाँ किसी पूर्व प्रकरण में सक्षम क्षेत्राधिकार के किसी औद्योगिक औद्योगिक अधिकरण द्वारा, जहाँ उक्त प्रश्न निर्णय के लिए आवश्यक रूप से उठा, उसे पहले ही अंतिम रूप से निर्णीत किया जा चुका हो। यह मामला बर्न एंड कंपनी और स्ट्रॉ बोर्ड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड के मामले में निर्णय के दायरे में आता है। हमने पूर्व प्रथम औद्योगिक अधिकरण के अधिनिर्णय से कई अंश निकाले हैं जो 30 अक्टूबर, 1971 के सेवोन्मुक्त नोटिस की वैधता से संबंधित मुद्दे को फिर से उठाने की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि कर्मकारों ने पहले औद्योगिक अधिकरण के समक्ष बहाली या धारा 25 एफ के तहत मुआवज़े की राहत का दावा नहीं किया और खुद को केवल धारा 25 एफएफएफ के तहत मुआवज़े तक सीमित रखा जबकि प्रथम अधिनिर्णय के पारित होने से पूर्व ही कारखाना को 1972 में दोबारा खोला गया था। इसलिए कर्मकारों को दूसरे औद्योगिक अधिकरण, जिसने दूसरा निर्देश निर्णीत किया, के समक्ष उक्त मामले को पुन उठाने और यह विरोध करने की कि वह निरंतर प्रबंधन के कर्मचारी रहे क्योंकि सेवोन्मुक्त और बंदी का

नोटिस अवैध था,की अनुमति नहीं दी जा सकती हैं। दूसरे औद्योगिक अधिकरण को उक्त विरोध को यह मानकर खारिज कर देना चाहिए था कि दिनांक 30 अक्टूबर 1971 के सेवोन्मुक्त के नोटिस कि वैधता उसके समक्ष प्रश्नगत नहीं हैं। दूसरे औद्योगिक अधिकरण ने सेवोन्मुक्त नोटिस के वैधता के विवाद्यक की पुनः समीक्षा कर और विपरीत दृष्टिकोण देकर त्रुटि की हैं। इसलिए दूसरे अधिकरण श्री एमए देशपांडे द्वारा पारित अधिनिर्णय दिनांक मार्च 20, 1980 अपास्त किये जाने योग्य हैं और तदनुसार अपास्त किया जाता हैं।

समापन से पूर्व पहले हमें प्रबंधन द्वारा हमारे समक्ष दी गयी रियायत का उल्लेख करना चाहिए। जब 20 मार्च 1980 के अधिनिर्णय के खिलाफ दायर रिट याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित थी, तो कर्मकार अधिनियम की धारा 33-सी (1) के तहत सहायक श्रम आयुक्त के समक्ष इसका निष्पादन करने के लिए प्रवृत्त हुए। उन्होंने प्रबंधन के खिलाफ 96,98,492.48 रुपये की वसूली का प्रमाण पत्र जारी किया। जब कलेक्टर ने उपरोक्त राशि की वसूली के लिए कदम उठाए, तो अपीलकर्ता ने अधिनियम की धारा 33-सी (1) के तहत पारित आदेश के खिलाफ, उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका 2081 /1983 दायर की। वह याचिका आरम्भ में ही ख़ारिज कर दी गयी। डिवीजन बेंच के समक्ष उस आदेश के खिलाफ एक अपील संख्या 394/1984 दायर की गयी जो 27 जून 1984 को खारिज कर दी गई थी। उस आदेश के खिलाफ प्रबंधन ने

विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 9337/1984 में इस न्यायालय के समक्ष एक विशेष अनुमति याचिका दायर की थी। जब वह याचिका सुनवाई के लिए आई, तो इस न्यायालय ने याचिका पर नोटिस जारी किया और उस राशि की वसूली पर रोक या आदेश भी जारी किया, जिसके लिए 27 अगस्त, 1984 को एक प्रमाण पत्र जारी किया गया था, बशर्ते अपीलकर्ता उस आदेश में निर्दिष्ट तिथियों पर किश्तों में 48,00,000 रुपये (अड़तालीस लाख रुपये) जमा करे। हालांकि ऊपर निर्दिष्ट तारीखों पर नहीं परन्तु प्रबंधन ने 48,00,000 रुपये की पूरी राशि जमा कर दी, और उक्त राशि अंततः श्रम आयुक्त, वाणिज्य केंद्र, तारदेओ बॉम्बे के कब्जे में आ गई। उक्त राशि में से, इस न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश के कुछ राशि पहले ही कुछ कर्मकारों (या उनके कानूनी प्रतिनिधियों, जहां भी कर्मकार की मृत्यु हो गई थी) के बीच वितरित की जा चुकी है, जिनके कहने पर दूसरा निर्देश दिया गया था। अपीलकर्ता-प्रबंधन के विद्वान वकील ने हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है कि भले ही अधिनिर्णय को अपास्त कर दिया गया हैं पर वह श्रम आयुक्त के पास पड़े 48,00,000 रुपये कि वापसी के दावा का अधिकार छोड़ रहे हैं और यह 48,00,000 रुपये की राशि (खर्चे कोई हो तो उन्हें घटाकर) दूसरे निर्देश के 440 कामगारों के बीच सामान रूप से, अनुग्रह राशि के रूप में वितरित की जा सकती है। उन्होंने यह भी प्रार्थना की कि कलेक्टर द्वारा अलग से वसूल की गई 1,63,000 रुपये की राशि अपीलकर्ता को वापस कर दी जाए। हम प्रबंधन की ओर से

किए गए निवेदन की बहुत सराहना करते हैं। इससे संबंधित कर्मकारों को काफी राहत मिलती है क्योंकि अब दी जाने वाली 48,00,000 रुपये की राशि उस राशि के तीन गुना से कुछ अधिक के बराबर है जो कर्मकारों को अधिनियम की धारा 25 एफएफएफ के तहत मिलती, यदि वे पहले निर्देश में सफल होते। ऐसा कहा गया है कि अधिनियम की धारा 25 एफएफएफ के अनुसार वे 1971 में लगभग 14,00,000 रुपये पाने के हकदार होते और यदि उस राशि पर आज तक उचित दर पर गणना की गई ब्याज भी जोड़ दी जाती, तो देय कुल राशि 48,00,000 रुपये से कम होती। इसलिए, अब प्रस्तावित 48,00,000 रुपये की राशि उदार पक्ष में है। इसलिए, हम निर्देश देते हैं कि श्रम आयुक्त के पास मौजूद 48,00,000 रुपये की राशि को 440 कर्मकारों के बीच समान रूप से वितरित किया जाएगा। यदि किसी कर्मकार या उनके कानूनी प्रतिनिधियों को इसमें से कोई राशि पहले ही मिल चुकी है, तो वह राशि उन्हें देय राशि के विरुद्ध समायोजित की जाएगी। यदि किसी कर्मकार को इस आदेश के तहत देय पूरी राशि प्राप्त हो गई है तो उसे और कुछ भी भुगतान करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि कर्मकारों की पहचान को लेकर कुछ विवाद है। श्रम आयुक्त सभी 440 कर्मकारों के नाम एक स्थानीय समाचार पत्र में प्रकाशित करके सूचित करेंगे कि वे इस आदेश के तहत वितरित की जाने वाली राशि के हकदार होंगे और वह आदेश के अनुसार कर्मकारों की पहचान के बारे में पूरी तरह से संतुष्ट होने के बाद राशि का वितरण करेंगे जैसा की इस इस न्यायालय

द्वारा 13 मार्च 1986 को सीएमपी संख्या 7068/1986 में आदेशित किया गया। वह अपने पास उपलब्ध राशि से समाचार पत्र में प्रकाशन की लागत को पूरा करेगा और केवल शेष राशि को ऊपर बताए अनुसार समान रूप से वितरित किया जाएगा। यदि संबंधित कर्मकारों की अनुपलब्धता के कारण इस आदेश के अनुसार पूरी राशि वितरित नहीं की जाती है, तो राशि प्रबंधन को वापस नहीं की जाएगी। श्रम आयुक्त इस न्यायालय से निर्देश मांगेंगे कि शेष राशि का विनियोजन कैसे किया जाना चाहिए। किसी भी स्थिति में प्रबंधन इसका कोई भी हिस्सा वापस नहीं लेगा। यह आदेश 30 अक्टूबर, 1971 से पहले नियोजित सभी कर्मकारों के सभी दावों के पूर्ण निपटान में पारित किया गया है। किसी और को इस प्रकार का कोई भी विवाद उठाने की अनुमति नहीं दी जाएगी। हालाँकि, कलेक्टर द्वारा वसूल की गई 1,63,000 रुपये की राशि अपीलकर्ता को वापस कर दी जाएगी।

तदनुसार अपील की अनुमति दी जाती है और 20 मार्च 1980 के निर्देश (आईटी) 245/1975 के अधिनिर्णय और उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश और डिवीजन बेंच के फैसले को उपरोक्त निर्देशों के अधीन रद्द कर दिया जाता है। कोई लागत नहीं.

उपरोक्त उल्लेखित विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 9337/1984 का भी इस निर्णय द्वारा निपटारा किया जाता है। हालाँकि, यह स्पष्ट है कि सहायक श्रम आयुक्त द्वारा जारी प्रमाण पत्र के अनुसार

वसूली की कार्यवाही आगे नहीं बढ़ाई जा सकती क्योंकि इस निर्णय द्वारा अधिनिर्णय को ही रद्द कर दिया गया है।

अपील स्वीकार की गयी

यह अनुवाद आर्टिफिशियल टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी विनोद कुमार बागरी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानिय भाषा में अनुवादित किया गया है ओर किसी अन्य उददेश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक ओर अधिकारिक उददेश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा ओर निष्पादन व कार्यान्वयन के उददेश्य से अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।